स्वामी विवेकानंद

राजयोग

प्रभात

राजयोग

स्वामी विवेकानंद

प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
ISO 9001:2008 प्रकाशक

भूमिका

ऐतिहासिक जगत् के प्रारंभ से लेकर वर्तमान काल तक मानव-समाज में अनेक अलौकिक घटनाओं के वर्णन देखने को मिलते हैं। आज भी, जो समाज आधुनिक विज्ञान के भरपूर आलोक में रह रहे हैं, उनमें भी ऐसी घटनाओं की गवाही देनेवाले लोगों की कमी नहीं है। पर हाँ, ऐसे प्रमाणों में अधिकांश विश्वास योग्य नहीं; क्योंकि जिन व्यक्तियों से ऐसे प्रमाण मिलते हैं, उनमें से बहुतेरे अज्ञ हैं, अंधविश्वासी हैं अथवा धूर्त हैं। बहुधा यह भी देखा जाता है कि लोग जिन घटनाओं को अलौकिक कहते हैं, वे वास्तव में नकल हैं। पर प्रश्न उठता है, किसकी नकल? यथार्थ अनुसंधान किए बिना कोई बात बिलकुल उड़ा देना सत्यप्रिय वैज्ञानिक-मन का परिचय नहीं देता। जो वैज्ञानिक सूक्ष्मदर्शी नहीं, वे मनोराज्य की नाना प्रकार की अलौकिक घटनाओं की व्याख्या करने में असमर्थ हो, उन सबका अस्तित्व ही उड़ा देने का प्रयत्न करते हैं। अतएव वे तो उन व्यक्तियों से अधिक दोषी हैं, जो सोचते हैं कि बादलों के ऊपर अवस्थित कोई पुरुषविशेष या बहुत से पुरुषगण उनकी प्रार्थनाओं को सुनते हैं और उनके उत्तर देते हैं—अथवा उन लोगों से, जिनका विश्वास है कि ये पुरुष उनकी प्रार्थनाओं के कारण संसार का नियम ही बदल देंगे। क्योंकि इन बाद के व्यक्तियों के संबंध में यह दुहाई दी जा सकती है कि वे अज्ञानी हैं, अथवा कम-से-कम यह कि उनकी शिक्षा-प्रणाली दूषित रही है, जिसने उन्हें ऐसे अप्राकृतिक पुरुषों का सहारा लेने की सीख दी और जो निर्भरता अब उनके अवनत स्वभाव का एक अंग ही बन गई है। पर पूर्वोक्त शिक्षित व्यक्तियों के लिए तो ऐसी किसी दुहाई की गुंजाइश नहीं।

हजारों वर्षों से लोगों ने ऐसी अलौकिक घटनाओं का पर्यवेक्षण किया है, उनके संबंध में विशेष रूप से चिंतन किया है और फिर उनमें से कुछ साधारण तत्त्व निकाले हैं; यहाँ तक कि मनुष्य की धर्मप्रवृत्ति की आधारभूमि पर भी विशेष रूप से, अत्यंत सूक्ष्मता के साथ विचार किया है। इन समस्त चिंतन और विचारों का फल यह राजयोग-विद्या है। यह राजयोग आजकल के अधिकांश वैज्ञानिकों की अक्षम्य धारा का अवलंबन नहीं करता—वह उनकी भाँति उन घटनाओं के अस्तित्व को एकदम उड़ा नहीं देता, जिनकी व्याख्या दुरूह हो; प्रत्युत वह तो धीर भाव से, पर स्पष्ट शब्दों में, अंधविश्वास से भरे व्यक्ति को बता देता है कि यद्यपि अलौकिक घटनाएँ, प्रार्थनाओं की पूर्ति और विश्वास की शक्ति, ये सब सत्य हैं, तथापि इनका स्पष्टीकरण ऐसी अंधविश्वासपूर्ण व्याख्या द्वारा नहीं हो सकता कि ये सब व्यापार बादलों के ऊपर अवस्थित किसी व्यक्ति या कुछ व्यक्तियों द्व्रारा संपन्न होते हैं। वह घोषणा करता है कि प्रत्येक मनुष्य सारी मानवजाति के पीछे वर्तमान ज्ञान और शक्ति के अनंत सागर की एक क्षुद्र प्रणाली मात्र है। वह शिक्षा देता है कि जिस प्रकार वासनाएँ और अभाव मानव के अंतर में हैं, उसी प्रकार उसके भीतर ही मन के अभावों के मोचन की शक्ति भी है; जहाँ कहीं और जब कभी किसी वासना, अभाव या प्रार्थना की पूर्ति होती है, तो समझना होगा कि वह इस अनंत भंडार से ही पूर्ण होती है, किसी अप्राकृतिक पुरुष से नहीं। अप्राकृतिक पुरुषों की भावना मानव में कार्य की शक्ति को भले ही कुछ परिणाम में उद्दीप्त कर देती हो, पर उससे आध्यात्मिक अवनति भी आती है। उससे स्वाधीनता चली जाती है, भय और अंधविश्वास हृदय पर अधिकार जमा लेते हैं तथा 'मनुष्य स्वभाव से ही दुर्बल प्रकृति है' ऐसा भयंकर विश्वास हममें घर कर लेता है। योगी कहते हैं कि अप्राकृतिक नाम की कोई चीज नहीं है, पर हाँ, प्रकृति में दो प्रकार की अभिव्यक्तियाँ हैं—एक है स्थूल और दूसरी सूक्ष्म। सूक्ष्म कारण है और स्थूल कार्य है। स्थूल सहज ही इंद्रियों द्वारा उपलब्ध किया जा सकता है, पर सूक्ष्म नहीं। राजयोग के अभ्यास से सूक्ष्मतर अनुभूति अर्जित होती रहती है।

भारतवर्ष में जितने वेदमतानुयायी दर्शनशास्त्र हैं, उन सबका एक ही लक्ष्य है, और वह है—पूर्णता प्राप्त करके

आत्मा को मुक्त कर लेना। इसका उपाय है योग। 'योग' शब्द बहुभावव्यापी है। सांख्य और वेदांत उभय मत किसी-न-किसी प्रकार से योग का समर्थन करते हैं।

प्रस्तुत पुस्तक का विषय है—'राजयोग'। पातंजलसूत्र राजयोग का शास्त्र है और राजयोग पर सर्वोच्च प्रामाणिक ग्रंथ है। अन्यान्य दार्शनिकों का किसी-किसी दार्शनिक विषय में पतंजलि से मतभेद होने पर भी वे सभी, निश्चित रूप से, उनकी साधना-प्रणाली का अनुमोदन करते हैं। लेखक ने न्यूयॉर्क में कुछ छात्रों को इस योग की शिक्षा देने के लिए जो व्याख्यान दिए थे, वे ही इस पुस्तक के प्रथम अंश में निबद्ध हैं। और इसके दूसरे अंश में पतंजलि के सूत्र, उन सूत्रों के अर्थ और उन पर संक्षिप्त टीका भी सन्निविष्ट कर दी गई है। जहाँ तक संभव हो सका, पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग न करने और वार्त्तालाप को सहज और सरल भाषा में लिखने का यत्न किया गया है। इसके प्रथमांश में साधनार्थियों के लिए कुछ सरल और विशेष उपदेश दिए गए हैं, 'पर उन सभी को यहाँ विशेष रूप से सावधान कर दिया जाता है कि योग के कुछ साधारण अंगों को छोड़कर, निरापद योगशिक्षा के लिए गुरु का सदा सान्निध्य रहना आवश्यक है।' वार्त्तालाप के रूप में प्रदत्त ये सब उपदेश यदि लोगों के हृदय में इस विषय पर और भी अधिक जानने की पिपासा जगा दे, तो फिर गुरु का अभाव न रहेगा।

पातंजल दर्शन सांख्य मत पर स्थापित है। इन दोनों मतों में अंतर बहुत ही थोड़ा है। इनके दो प्रधान भेद ये हैं—पहला तो पतंजलि आदिगुरु के रूप में एक सगुण ईश्वर की सत्ता स्वीकार करते हैं, जब कि सांख्य का ईश्वर लगभग पूर्णता प्राप्त एक व्यक्ति मात्र है, जो कुछ समय तक एक सृष्टिकल्प का शासन करता है। और दूसरा, योगीगण आत्मा या पुरुष के समान मन को भी सर्वव्यापी मानते हैं, पर साख्यमत वाले नहीं।

—स्वामी विवेकानंद

प्रथम अध्याय

अवतरणिका

हमारा समस्त ज्ञान स्वानुभूति पर आधारित है, जिसे हम आनुमानिक ज्ञान कहते हैं, और जिसमें हम सामान्य से सामान्यतर या सामान्य से विशेष तक पहुँचते हैं, उसकी बुनियाद स्वानुभूति है। जिनको निश्चित विज्ञाने कहते हैं, उनकी सत्यता सहज ही लोगों की समझ में आ जाती है, क्योंकि वे प्रत्येक व्यक्ति से कहते हैं—''तुम स्वयं यह देख लो कि यह बात सत्य है अथवा नहीं, और तब उस पर विश्वास करो।'' वैज्ञानिक तुमको किसी भी विषय पर विश्वास कर बैठने को न कहेंगे। उन्होंने स्वयं कुछ विषयों का प्रत्यक्ष अनुभव किया है और उन पर विचार करके कुछ सिद्धांतों पर पहुँचे हैं। जब वे अपने उन सिद्धांतों पर हमसे विश्वास करने के लिए कहते हैं, तब जनसाधारण की अनुभूति पर उनके सत्यासत्य के निर्णय का भार छोड़ देते हैं। प्रत्येक निश्चित विज्ञान की एक सामान्य आधारभूमि है और उससे जो सिद्धांत उपलब्ध होते हैं, इच्छा करने पर कोई भी उनका सत्यासत्य तत्काल समझ ले सकता है। अब प्रश्न यह है, धर्म की ऐसी सामान्य आधारभूमि कोई है भी या नहीं? हमें इसका उत्तर देने के लिए 'हाँ' और 'नहीं', दोनों कहने होंगे।

संसार में धर्म के संबंध में सर्वत्र सामान्यत: ऐसी शिक्षा मिलती है कि धर्म केवल श्रद्धा और विश्वास पर स्थापित है, और अधिकांश स्थलों में तो वह भिन्न-भिन्न मतों की समष्टि मात्र है। यही कारण है कि धर्मों के बीच केवल लड़ाई-झगड़ा दिखाई देता है। ये मत फिर विश्वास पर स्थापित हैं। कोई-कोई कहते हैं कि बादलों के ऊपर एक महान् पुरुष है, वही सारे संसार का शासन करता है; और वक्ता महोदय केवल अपनी बात के बल पर ही मुझसे इसमें विश्वास करने को कहते हैं। मेरे भी ऐसे अनेक भाव हो सकते हैं, जिन पर विश्वास करने के लिए मैं दूसरों से कहता हूँ और यदि वे कोई युक्ति चाहें, इस विश्वास का कारण पूछें, तो मैं उन्हें युक्ति-तर्क देने में असमर्थ हो जाता हूँ। इसीलिए आजकल धर्म और दर्शन-शास्त्रों की इतनी निंदा सुनने में आती है। प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति का मानो यही मनोभाव है—'अहो, ये धर्म कुछ मतों के गट्ठे भर हैं! उनके सत्यासत्य-विचार का कोई एक मापदंड नहीं; जिसके जी में जो आया, बस, वही बक गया!' किंतु ये लोग चाहे जो सोचें, वास्तव में धर्मविश्वास की एक सार्वभौमिक भित्ति है—वही विभिन्न देशों के विभिन्न संप्रदायों के भिन्न-भिन्न मतवादों और सब प्रकार कई विभिन्न धारणाओं को नियमित करती है। उन सबके मूल में जाने पर हम देखते हैं कि वे सभी सार्वजनिक अनुभूति पर प्रतिष्ठित हैं।

पहली बात तो यह कि यदि तुम पृथ्वी के भिन्न-भिन्न धर्मों का जरा विश्लेषण करो, तो तुमको ज्ञात हो जाएगा कि वे दो श्रेणियों में विभक्त हैं। कुछ की शास्त्रभित्ति है, और कुछ की शास्त्रभित्ति नहीं। जो शास्त्रभित्ति पर स्थापित हैं, वे सुदृढ़ हैं, उन धर्मों के माननेवालों की संख्या भी अधिक है। जिनकी शास्त्रभित्ति नहीं है, वे धर्म प्राय: लुप्त हो गए हैं। कुछ नए उठे अवश्य हैं, पर उनके अनुयायी बहुत थोड़े हैं। फिर भी उक्त सभी संप्रदायों में यह मतैक्य दीख पड़ता है कि उनकी शिक्षा विशिष्ट व्यक्तियों के प्रत्यक्ष अनुभव मात्र हैं। ईसाई तुमसे अपने धर्म पर, ईसा पर, ईसा के अवतारत्व पर, ईश्वर और आत्मा के अस्तित्व पर और उस आत्मा की भविष्य उन्नति की संभवनीयता पर विश्वास करने को कहता है। यदि मैं उससे इस विश्वास का कारण पूछूँ तो वह कहता है, ''यह मेरा विश्वास है।'' किंतु यदि तुम ईसाई धर्म के मूल में जाओ, तो देखोगे कि वह भी प्रत्यक्ष अनुभूति पर स्थापित है। ईसा ने कहा है,